प्राकृतिक तटरक्षकः मैंग्रोव वन

दीपक कोहली

मैंग्रोव सामान्यतः ऐसे पेड़-पौधे होते हैं जो तटीय क्षेत्रों में खारे पानी में पाए जाते हैं। ये उष्णकटिबन्धीय और उपोष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों में पाए जाते हैं। इन वनस्पतियों को तटीय वनस्पतियाँ अथवा कच्छीय वनस्पतियाँ भी कहा जाता है। ये वनस्पतियाँ समुद्र तटों पर, नदियों के मुहानों व ज्वार प्रभावित क्षेत्रों में पाई जाती हैं। विषुवत रेखा के आसपास के क्षेत्रों में जहाँ जलवायु गर्म तथा नम होती है, वहाँ मैंग्रोव वन की लगभग सभी प्रजातियाँ पाई जाती हैं।

पृथ्वी पर इस प्रकार के मैंग्रोव वनों का विस्तार एक लाख वर्ग किलोमीटर में है। मैंग्रोव वन मुख्य रूप से ब्राज़ील (25,000 वर्ग किलोमीटर), इंडोनेशिया (21,000 वर्ग किलोमीटर) और ऑस्ट्रेलिया (11,000 वर्ग किलोमीटर) में फैला हुआ है। भारत में 6,740 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर इस प्रकार के वन फैले हुए हैं। ये विश्व भर में विद्यमान मैंग्रोव वनों का 7 प्रतिशत हैं। इन वनों में पचास से भी अधिक जातियों के मैंग्रोव वृक्ष पाए जाते हैं। मैंग्रोव वनों का अधिकांश हिस्सा (82 प्रतिशत) देश के पूर्वी भागों में पाया जाता है।

मैंग्रोव वृक्षों के बीजों का अंकुरण एवं विकास पेड़ पर लगे-लगे ही होता है। जब समुद्र में ज्वार आता है और पानी ज़मीन की ओर फैलता है, तब कुछ अंकुरित बीज पानी के बहाव से टूटकर गिर जाते हैं और पानी के साथ बहने लगते हैं। ज्वार के उतरने पर ये ज़मीन पर यहाँ-वहाँ जम जाते हैं और आगे विकसित होते हैं। इसी

कारण इन्हें जरायुज (या पिण्डज) कहते हैं, यानी सीधे सन्तान उत्पन्न करने वाले।

चूँकि ये पौधे लवणीय पानी में रहते हैं, इसलिए उनके लिए यह आवश्यक होता है कि इस पानी में मौजूद लवण उनके शरीर में एकत्र न होने लगें। इन वृक्षों की जड़ों एवं पत्तियों पर खास तरह की लवण ग्रन्थियाँ होती हैं, जिनसे लवण निरन्तर घुलित रूप में निकलता रहता है। वर्षा का पानी इस लवण को बहा ले जाता है। इन पेड़ों की एक अन्य विशेषता उनकी श्वसन जड़ें हैं। पानी में ऑक्सीजन की कमी के कारण इन पेड़ों की जड़ों को पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है। इस समस्या से निपटने के लिए उनमें विशेष प्रकार की जड़ें पाई जाती हैं, जो सामान्य जड़ों के विपरीत ज़मीन से ऊपर निकल आती हैं। इनमें छोटे-छोटे छिद्र होते हैं, जिनकी सहायता से ये हवा ग्रहण करके उसे नीचे की जड़ों को पहुँचाती हैं। इन जड़ों को श्वसन मूल कहा जाता है।

इन श्वसन मूलों का दूसरा कार्य दलदली भूमि में इन वृक्षों को स्थिरता प्रदान करना भी है। मैंग्रोव पौधों के तनों के केन्द्र में कठोर लकड़ी नहीं पाई जाती, बल्कि इसके स्थान पर पतली नलिकाएँ होती हैं जो पूरे तने में फैली रहती हैं। इस कारण मैंग्रोव पौधे बाहरी छाल तथा तने को होने वाली क्षति को सहन नहीं कर सकते हैं। इन पौधों में पाई जाने वाली वायवीय जड़ें कई रूप ले सकती हैं। *ऐविसेनिया* जैसी प्रजाति के पौधों में ये जड़ें छोटी तथा तार जैसी होती हैं, जो तने से निकलकर चारों ओर फैली होती हैं। ये जड़ें भूमि तक पहुँचकर पौधों को सहारा देती हैं।

चित्र-1: मैंग्रोव का पानी के ऊपर और नीचे का दृश्य।

मैंग्रोव वृक्षों में जल संरक्षण की क्षमता भी पाई जाती है। वाष्पोत्सर्जन द्वारा पानी के उत्सर्जन को रोकने के लिए इन पौधों में मोटी चिकनी पत्तियाँ होती हैं।

चित्र-2: *राइज़ोफोरा* वृक्ष के प्रजनक (propagule)। किसी वृक्ष की प्रजाति को फैलाने वाले अंग को प्रोपेग्यूल कहा जाता है। इस वृक्ष के लम्बे लटकते हुए भाग (प्रेपेग्यूल) वृक्ष से टूटने के बाद एक नए पौधे का निर्माण करते हैं।

पत्तियों की सतह पर पाए जाने वाले रोम पत्ती के चारों ओर वायु की एक परत को बनाए रखते हैं। ये पौधे रसदार पत्तियों में पानी संचित कर सकते हैं। ये सभी विशेषताएँ इन्हें प्रतिकूल वातावरण में जीवित रहने योग्य बनाती हैं। विश्व में चार मुख्य प्रकार के मैंग्रोव वृक्ष पाए जाते हैं - लाल मैंग्रोव, काले मैंग्रोव, सफेद मैंग्रोव और बटनवुड मैंग्रोव। लाल मैंग्रोव वनस्पति की श्रेणी में वे पौधे आते हैं जो बहुत अधिक खारे पानी को सहन करने की क्षमता रखते हैं तथा समुद्र के नज़दीक उगते हैं। *राइज़ोफोरा* प्रजाति के वृक्ष इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं।

काली मैंग्रोव वनस्पति की श्रेणी में वे पौधे आते हैं जिनकी खारे पानी को सहने की क्षमता अपेक्षाकृत कम होती है। *ब्रुगेरिया* प्रजाति के वृक्ष इस श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं।

सफेद मैंग्रोव वनस्पति का नाम इनकी चिकनी सफेद छाल के कारण पड़ा है। इन पौधों को इनकी जड़ों तथा पत्तियों की विशेष प्रकार की बनावट के कारण अलग से पहचाना जा सकता है। *ऐविसेनिया* प्रजाति के पौधे इस श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं।

बटनवुड मैंग्रोव पौधे झाड़ी के आकार के होते हैं तथा इनका यह नाम इनके लाल-भूरे रंग के तिकोने फलों के कारण है। *कोनोकार्पस* प्रजाति के पौधे इस श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं।

भारत में मैंग्रोव वनों का 59 प्रतिशत पूर्वी तट (बंगाल की खाड़ी), 23 प्रतिशत पश्चिमी तट (अरब सागर) तथा 18 प्रतिशत अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह में पाया जाता है। भारतीय मैंग्रोव वनस्पतियाँ मुख्यतः तीन प्रकार के तटीय क्षेत्रों में पाई जाती हैं - डेल्टा, बैकवॉटर व नदी मुहाने तथा द्वीपीय क्षेत्र। डेल्टा क्षेत्र में उगने वाले मैंग्रोव मुख्यतः पूर्वी तट पर (बंगाल की खाड़ी में) पाए जाते हैं जहाँ गंगा, ब्रह्मपुत्र, महानदी, कृष्णा, गोदावरी और कावेरी जैसी बड़ी नदियाँ

विशाल डेल्टा क्षेत्रों का निर्माण करती हैं। नदी मुहानों पर उगने वाली मैंग्रोव वनस्पति मुख्यतः पश्चिमी तट पर पाई जाती हैं जहाँ सिन्धु, नर्मदा, ताप्ती जैसी प्रमुख नदियाँ कीप के आकार के मुहानों का निर्माण करती हैं। द्वीपीय मैंग्रोव द्वीपों में पाए जाते हैं जहाँ छोटी नदियों, ज्वारीय क्षेत्रों तथा खारे पानी की झीलों में उगने के लिए आदर्श परिस्थितियाँ उपस्थित होती हैं।

भारत में विश्व के कुछ प्रसिद्ध मैंग्रोव क्षेत्र पाए जाते हैं। सुन्दरवन विश्व का सबसे बड़ा मैंग्रोव क्षेत्र है। इसका कुछ भाग भारत में तथा कुछ बांग्लादेश में है। सुन्दरवन का भारत में आने वाला क्षेत्र गंगा तथा ब्रह्मपुत्र नदियों के डेल्टा क्षेत्रों के पश्चिमी भाग में है। इन नदियों द्वारा ताज़े पानी की लगातार आपूर्ति के कारण वन क्षेत्र में तथा समुद्र के नज़दीक पानी में खारापन समुद्र की अपेक्षा सदैव कम रहता है। उड़ीसा तट पर स्थित महानदी डेल्टा का निर्माण महानदी, ब्रह्मणी तथा वैतरणी नदियों द्वारा होता है। ताज़े पानी की आपूर्ति के कारण यहाँ भी जैव विविधता तथा पौधों का घनत्व सुन्दरवन जैसा ही है। गोदावरी मैंग्रोव क्षेत्र (आँध्र प्रदेश) गोदावरी नदी के डेल्टा में स्थित है। कृष्णा डेल्टा में भी मैंग्रोव वनस्पतियाँ पाई जाती हैं। तमिलनाडु में कावेरी डेल्टा में पिचावरम और मुथुपेट मैंग्रोव वन स्थित हैं।

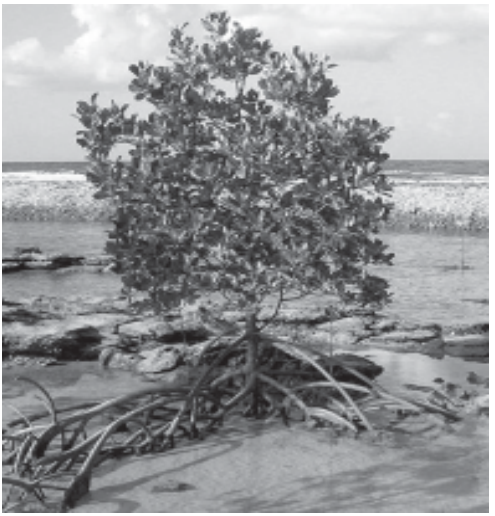

चित्र-3: मैंग्रोव की जड़ें अन्य पेड़ों की जड़ों से काफी भिन्न होती हैं। पानी के हटने के बाद इसकी जड़ें ऊपर दिखाई देती हैं।

मनुष्य द्वारा मैंग्रोव वनों का प्रयोग कई तरह से किया जाता है। स्थानीय निवासियों द्वारा इनका उपयोग भोजन, औषधि, टैनिन, ईंधन तथा इमारती लकड़ी के लिए किया जाता रहा है। तटीय इलाकों में रहने वाले लाखों लोगों के लिए जीवनयापन का साधन इन वनों से प्राप्त होता है तथा ये उनकी पारम्परिक संस्कृति को जीवित रखते हैं। मैंग्रोव वन धरती व समुद्र के बीच एक अवरोधक बफर की तरह कार्य करते हैं तथा समुद्री

प्राकृतिक आपदाओं से तटों की रक्षा करते हैं। ये तटीय क्षेत्रों में तलछट के कारण होने वाले जान-माल के नुकसान को रोकते हैं।

मैंग्रोव उस क्षेत्र में पाई जाने वाली कई जन्तु प्रजातियों को शरण उपलब्ध कराते हैं। अनेक प्रकार के शैवालों तथा मछलियों द्वारा जड़ों का उपयोग आश्रय के लिए किया जाता है। मैंग्रोव पारिस्थितिकी तंत्र मत्स्य उत्पादन के लिए भी महत्वपूर्ण है। मछली तथा शंखमीन (शेल फिश) की बहुत-सी प्रजातियों के लिए मैंग्रोव प्रजनन स्थल तथा संवर्धन गृह की तरह कार्य करते हैं। मछलियों के अतिरिक्त मैंग्रोव वनों में अन्य जीव-जन्तु भी पाए जाते हैं। जैसे, बाघ (बंगाल टाइगर), मगरमच्छ, हिरन, फिशिंग कैट तथा पक्षी। डॉल्फिन, मैंग्रोव-बन्दर, ऊदबिलाव आदि मैंग्रोव से सम्बद्ध अन्य जीव हैं। बन्दर, केकड़े तथा अन्य जीव-जन्तु मैंग्रोव की पत्तियाँ खाते हैं। उनके द्वारा उत्सर्जित पदार्थों को जीवाणुओं द्वारा उपयोगी तत्वों में अपघटित कर दिया जाता है।

मैंग्रोव वृक्ष पानी से कार्बनिक अपशिष्ट पदार्थों तथा मिट्टी के कणों को अलग कर देते हैं जिससे पानी साफ होता है तथा उसमें पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है। यह अन्य सम्बद्ध इकोसिस्टम के लिए लाभप्रद है। मैंग्रोव क्षेत्रों में प्रवाल भित्तियाँ, समुद्री शैवाल तथा समुद्री घास अच्छी तरह पनपती हैं।

मैंग्रोव पौधों में सूर्य की तीव्र किरणों तथा पराबैंगनी-बी किरणों से बचाव की क्षमता होती है। उदाहरण के लिए, *ऐविसीनिया* प्रजाति के मैंग्रोव पौधे गर्म तथा शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में उगते हैं जहाँ पर सूर्य की प्रखर किरणें प्रचुर मात्रा में पहुँचती हैं। यह प्रजाति शुष्क जलवायु के लिए भलीभाँति अनुकूलित है। *राइज़ोफोरा* प्रजाति के पौधे अन्य मैंग्रोव पौधों की अपेक्षा अधिक पराबैंगनी-बी किरणों को सहन कर सकते हैं। मैंग्रोव पौधों की पत्तियों में फ्लेवेनॉइड होता है जो पराबैंगनी किरणों को रोकने का कार्य करता है।

मैंग्रोव वृक्षों की जड़ें ज्वार तथा तेज़ जल-धाराओं द्वारा होने वाले मिट्टी के कटाव को कम करती हैं। मैंग्रोव वृक्ष धीरे-धीरे मिट्टी को भेदकर तथा उसमें हवा पहुँचाकर उसे पुनर्जीवित करते हैं। जैसे-जैसे दलदली मिट्टी की दशा सुधरती है, उसमें अन्य पौधे भी उगने लगते हैं जिससे तूफान तथा चक्रवात के समय क्षति कम होती है। चक्रवात तटीय क्षेत्रों पर बहुत तीव्र गति से टकराते हैं और तट जलमग्न हो जाते हैं जिससे समुद्र किनारे रहने वाले जीव-जन्तुओं की भारी हानि होती है। *राइज़ोफोरा* जैसी कुछ मैंग्रोव प्रजातियाँ इन प्राकृतिक आपदाओं के विरुद्ध ढाल का काम करती हैं।

मैंग्रोव वनों की सुरक्षात्मक भूमिका का एक अच्छा उदाहरण 1999 में उड़ीसा तट पर आए चक्रवात के समय

देखने को मिला था। इस चक्रवात ने मैंग्रोव रहित क्षेत्रों में भारी तबाही मचाई थी, जबकि उन क्षेत्रों में नुकसान नगण्य था जहाँ मैंग्रोव वृक्षों की संख्या प्रचुर थी। सदियों से समुद्री तूफानों और तेज़ हवाओं का सामना करते आ रहे मैंग्रोव वन आज मनुष्य के क्रियाकलापों के कारण खतरे में हैं। लेकिन हाल के वर्षों की घटनाओं ने मनुष्य को मैंग्रोव वनों के प्रति अपने रवैये के बारे में सोचने पर विवश किया है।

सन् 2004 में तटीय क्षेत्रों में सुनामी से हुई भयंकर तबाही से वे क्षेत्र बच गए जहाँ मैंग्रोव वन इन लहरों के सामने एक ढाल की तरह खड़े थे। उस समय इन वनों ने हज़ारों लोगों की रक्षा की। इस घटना के बाद तटीय क्षेत्र के गाँवों में रहने वाले लोगों ने मैंग्रोव वनों को संरक्षण देने का निश्चय किया।

मैंग्रोव वनों का औषधीय उपयोग भी है। मैंग्रोव पौधों की प्रजातियों का उपयोग सर्पदंश, चर्मरोग, पेचिश तथा मूत्र सम्बन्धी रोगों के उपचार के लिए तथा रक्त शोधक के रूप में किया जाता है। स्थानीय मछुआरे *ऐविसीनिया ऑफिसिनेलिस* की पत्तियों को उबालकर उनके रस का उपयोग पेट तथा मूत्र सम्बन्धी रोगों के उपचार के लिए करते हैं। इस प्रकार देखें तो मैंग्रोव कई प्रकार से उपयोगी हैं।

सौभाग्य से पिछले कुछ समय में मैंग्रोव वनों में लोगों की रुचि जागृत हुई है। मानव सभ्यता के तथाकथित विकास के कारण अन्य पारिस्थितिकी तंत्रों की तरह मैंग्रोव क्षेत्रों के लिए भी खतरा उत्पन्न हो गया है। तटीय इलाकों में बढ़ते औद्योगीकरण तथा घरेलू एवं औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थों को समुद्र में छोड़े जाने से इन क्षेत्रों में प्रदूषण फैल रहा है। मैंग्रोव वनों के संरक्षण के लिए आवश्यक है कि इन पारिस्थितिकी तंत्रों का बारीकी से अध्ययन किया जाए।

तटवर्ती क्षेत्रों में मैंग्रोव वनों के विकास के कई कार्यक्रम आरम्भ किए गए हैं। भारत में भी इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है। तमिलनाडु के पिचावरम क्षेत्र में मैंग्रोव वृक्षारोपण के लिए इन्हें हरित-पट्टिका के रूप में लगाने का वृहत अभियान चलाया गया जिससे क्षेत्र में मैंग्रोव वनों की सघनता बढ़ी है। मैंग्रोव वनों का उचित प्रकार से संरक्षण एवं संवर्धन समय की माँग है। तभी तो हम आने वाली पीढ़ियों को समृद्ध मैंग्रोव वन विरासत में दे पाएँगे।

दीपक कोहली: उत्तर प्रदेश सरकार में उपसचिव के पद पर कार्यरत। विज्ञान लेखन में गहरी रुचि। लखनऊ में निवास।

यह लेख स्रोत फीचर्स, अप्रैल 2019 से साभार।